चाँदनी के घर

सुरेश कुमार शुक्ल 'सन्देश'

चाँदनी के घर

(हिन्दी-गजलें)

लोकवाणी संस्थान

डी–585/12, गली नं. 2, वजीराबाद रोड़,
अशोक नगर, दिल्ली–110093
दूरभाष : 2287098

चाँदनी के घर

सुरेश कुमार शुक्ल 'सन्देश'

लोकवाणी संस्थान

ISBN. 81-86201-21-1

मूल्य . 120.00
प्रथम सस्करण 2003
प्रकाशक . **लोकवाणी संस्थान**
डी-585/12, गली न. 2, अशोक नगर,
निकट वजीराबाद रोड, शाहदरा
दिल्ली—110 093
आवरण सज्जा . **अमिताव राय**
लेजर टाइपसैटिंग : **डी॰ के॰ ग्राफिक्स**
ए-48, अशोक नगर, मण्डौली रोड, शाहदरा,
दिल्ली-110 093 ✆ 2280453, 2120033
E-mail : deekay90@hotmail.com
मुद्रक : **आर. के. ऑफसेट दिल्ली**

CHANDNI KE GHAR (Hindi Gajal) By Suresh Kumar Shukla 'Sandesh'
Price · 120.00

हिन्दी-गजल के पुरोधा,
प्रख्यात विद्वान मनीषी,
नदी काव्यों के सारस्वत महाकवि,
पूज्य-गुरूदेव
डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त' जी
को
सादर समर्पित -

सुरेश कुमार शुक्ल 'सन्देश'

चाँदनी के घर; एक अवलोकन

गीतिकाओ के संसार में अपनी साहित्यिक पृष्ठभूमिपर 'चाँदनी के घर' की सर्जना करके श्री सुरेश कुमार शुक्ल 'सन्देश' ने जहाँ एक ओर देश के जन-गण-मन मे घर कर रहे भ्रष्टाचार, क्षेत्रवाद, आतंकवाद, भाषावाद इत्यादि को अनावृत किया है, वहीं दूसरी ओर युग की अस्मिता को समाप्तप्राय करने वाले आयामों को भी अन्तिम चेतावनी दी है। साथ ही इस क्रम में विषयान्तर स्वरूप फागुन, वसन्त, सावन की बयार में मन-मीत के मिलन और विरह-वियोग का दरस-परस भी किया है।

भारतीय काव्य परम्परा में स्थापित स्तवन-क्रम में माँ वाणी से जन-मानस मे मानवता का शुभ-संगीत प्रवाहित करने हेतु कवि याचित है, और आशा करता है-

'धरा पर धर्म-ध्वज फहरे,
सके हो सभ्यता संचय।
ऐक्य कर निर्झरित सस्वर,
विश्व-बन्धुत्व कर चिन्मय।'

'सन्देश' जी अपने नैसर्गिक-सुषमा से मण्डित और आध्यात्मिक-सूत्रों के कोष को निज में समेटे, गौरवशाली हिमागार का मुकुट पहने भारत को देखते हैं, और कह उठते हैं-

'जगा रहा मनुजत्व पी रहा कटुता सब जग भर की-
उदय-अस्त तक प्रसरित भाईचारा देश हमारा।'

राष्ट्र के मौलिक स्वर कवि की वाणी में मुखर हैं-

'मानवता का अक्षर-अक्षर मैं भारत हूँ।'

ग़ज़लकार भारत के जन-मानस में निहारता है, और फिर युग के दर्पण में एक से एक जाने-अनजाने प्रतिबिम्ब चित्रपट की भाँति दृष्टिगत होने लगते हैं। कहीं शहनाइयों के बीच नाचती-गाती परछाइयाँ, चाँदनी को घायल करके अपनी ही धुन में बहती पुरवाई, परदेशी को टेरती हुई प्रेयसी की अँगड़ाइयाँ तो कहीं सावनी बयार मे श्रृंगार के भाव। कहीं कुत्सित राजनीति के अघतन परिवेश पर व्यंग्य धर्मा प्रहार तो कहीं महानगरीय सभ्यता का यथार्थ चित्रण। युगीन झंझावातों एवं भौतिकता की आँधियों से तृषित मानवता की पुर्नप्रतिष्ठा के लिए कवि आशान्वित है-

'शोषण जननी पूँजीवादी प्रथा खत्म हो-
श्रम विजयी हो धरती पर मानवता आये।'

गोस्वामी जी का 'रामचरित मानस' कवि की दृष्टि मे मानव मूल्यो का अथाह-सागर, भारतीय उच्चादर्शो की अनुपम प्रस्तुति, आर्ष-सस्कृति का स्वर तथा धर्म-सम्प्रदाय की कटुता का प्रक्षालन करने वाला एक प्रज्ञा-वारिधि है, और मानवता की अटल कीर्ति का भूधर भी। गीता और मानस के प्रति इस प्रकार के हितकर भाव कवि की पुष्ट और शिवकारी-भावना के परिचायक है। कवि के स्वर रूढ़ियो के बन्धन काटते, मानवता का नव श्रृगार करते, काम की अट्टालिका को ध्वस्त करते, युग के नीरस उद्यान मे कोकिल के सुधारस बरसाने वाले स्वरों का आवाहन करते हुए युग के अमावरण से सीधे 'चॉदनी के घर' में जा पहुॅचते हैं, जो आज के युग की माँग है, मात्र एक विकल्प है और युग का सुधारवादी संकल्प भी है, जिसे पाठक सहज ही स्वीकार करेगा। यह ध्रुव सत्य है, और निरापद भी।

-गिरीश चन्द्र ओझा 'इन्द्र'
मऊ कुतुबपुर,
आजमगढ़ (उ प्र.)

हिन्दी ग़ज़ल; सोपान-दर-सोपान

आधुनिक हिन्दी कविता में दोहा, ग़ज़ल एव नवगीत का सृजन प्राथमिकता के आधार पर चल रहा है। इधर कविता छन्द के अभाव को बहुत समय से झेल रही थी। एक तरह से लयहीन खोखले शब्द जगत से कविता का मन पूरी तरह से ऊब चुका था; अत· उसका ध्यान एक बार फिर छन्दोबद्ध-रचना-धर्मिता की ओर आकृष्ट हुआ।

कविता एवं छन्द के पुनर्मिलन से दोहा, नवगीत एवं गजल आदि का विकास प्रारम्भ हुआ। दोहा नवगीत एवं गजल का तो युग ही चल रहा है। उपर्युक्त तीनों विधाओं में सर्वाधिक साहित्य सृजन हो रहा है। यद्यपि इनमें से कोई भी विधा ऐसी नहीं है जो बिल्कुल नयी हो, किन्तु सृजन, कथ्य एवं भाषा की दृष्टि इनमें पर्याप्त नवीनता के दर्शन अवश्य होते हैं। ग़ज़ल में यह स्वतन्त्रता रहती है कि कई शेरों मे भिन्न-भिन्न भावों के द्वारा अनेक सन्दर्भो को स्वर प्रदान किया जाता है। वैसे बहुत-सी गजलें ऐसी भी लिखी जा रही हैं जिनमें एक ही भाव-भूमि का चित्रण किया गया है, किन्तु इसे अनिवार्यता नहीं बनाया गया।

गज़ल अरब के शुष्क-रेतीले एवं नीरस वातावरण से निकलकर ईरान, काबुल कान्धार होते हुए अपने समर्थ आश्रयदाता शायर वली के सरंक्षण में पुष्पित एवं पल्लवित होने लगी। यहां की नैसर्गिक सुषमा से श्रीमण्डित प्रकृति की श्यामल घटाओं की खुली हुई लटों में उलझकर अपनी सुध-बुध खो बैठी, फिर अद्भुत छविमती धरती पर पग-पग बढती हुई अपनी पारम्परिक छवि का परिमार्जन कर अपने भाग्योदय को सराह उठी।

कभी नीलगिरि की धवल बाहुओं में समा जाती, कभी चाँदनी मे डूब जाती, कभी गोदा-कावेरी के तट पर मन्द-मन्द मलयानित का शुभस्पर्श करती, कभी समुद्र के अनन्त सौन्दर्य का अनिमेष दर्शन करती, कभी प्रभात की लालिमा से कपोल सजाती, कभी संध्या के सिन्दूर से माँग भरती, कभी अमराइयों में कोयल के साथ गाती तो कभी तितलियों के साथ गुलाबों का चुम्बन करती, कभी वसन्त की मादकता मे मदमस्त हो उठती तो कभी पतझर में श्रृंगार खोजती, कभी मस्जिद में कलाम पढ़ती तो कभी मन्दिर में कीर्तन करती, कभी शबनम के मोती चुनती तो कभी भैरवी राग सुनाती, कभी महानगर के प्रदूषण एवं चकाचौंध से खिन्न हो जाती तो कभी गाँव में चैन की वंशी बजाती। अत: बहु आयामी भाव-जगत में प्रवेश करते ही गज़ल के रूप-रंगों में उभार एवं निखार आने लगा। वह उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हुई और निरन्तर बढ़ती ही चली गयी।

'वली साहब' की अनेक गज़ले हिन्दी के बिल्कुल सन्निकट हैं उन्हें हिन्दी-गज़ल की परम्परा मे सहर्ष रखा गया है। वली की गज़ल का एक शेर यहां द्रष्टव्य है-

"विरागीजो कहाते हैं उन्हे घर-बार करना क्या?
हुई जोगन जभी भी पी की उसे संसार करना क्या?"

अब गजल वेश्यालय के घुँघरूओ से दूषित न होकर कुलवधू के मर्यादित श्रृंगार से श्रीमण्डित हो चुकी है। अब किसी की भी कलमुँही नजर उसे नहीं लग सकती। गजल ने अखण्ड-साधना के द्वारा अपनी एक सबल सत्ता को स्थापित कर लिया है। उसका व्यक्तित्व पूर्ण उत्कर्ष के साथ उभर कर साहित्य के धरातल पर आया है। जो उसकी सफलता का परिपुष्ट प्रमाण है।

अब उसके पास परिनिष्ठित भाषा का दिव्य सिंहासन है, रदीफ-काफिया के जड़ाऊ कंगन हैं, मात्रिक-छन्दो के सिपाही उसके चारों तरफ चल रहे हैं, सुन्दर भाव भूमियो के मन्त्री हैं, यथार्थ की प्रखर तलवार उसके हाथ में है, शरीर पर भव्य भारतीय आभूषण है, ऐतिहासिक एवं पौराणिक प्रतीक और मिथकों का अक्षय कोष है, और मिला है उसे भारत मॉ का प्यार एवं दुलार।

हिन्दी-कविता में ग़ज़ल का ज्यो-ज्यों विकास हुआ त्यों-त्यों विद्वानों ने इसे अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया और अलग-अलग संज्ञाओं से अभिहित करते गये। सिद्ध-प्रसिद्ध हिन्दी गजलकार श्री चन्द्रसेन 'विराट' ने हिन्दी-ग़ज़ल को 'मुक्तिका' नाम दिया, प्रख्यात गीतकार श्री गोपालदास 'नीरज' ने 'गीतिका' की संज्ञा प्रदान की एव नदी काव्यो के सारस्वत महाकवि डा. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त' जी ने अपनी मौलिक शोध के आधार पर हिन्दी-गजल को 'सूक्तिका' नाम दिया। कई अन्य रचनाकारों ने इसे 'तेवरी', 'गीतल', 'अनुगीत' एवं 'नयी-गजल' इत्यादि संज्ञाओं से विभूषित किया है। दुष्यन्त कुमार के बाद हिन्दी-कविता में गजल को 'हिन्दी-गजल' कहा जाता रहा है। प्रतिष्ठित गजलकार श्री जहीर कुरेशी 'हिन्दी-प्रवृत्ति की गजल' कहना पसन्द करते हैं। हिन्दी के कवियों ने पूरी निष्ठा एवं ईमानदारी के साथ गजल को 'जुल्फो' में उलझने की परम्परा से निकालकर समसामयिक युगीन-सन्दर्भो से जोड दिया। यह साहसपूर्ण प्रयास सहज ही अपनी श्लाघा करवा लेता है।

समय-समय पर वाद, खेमे और शिविरो के प्रादुर्भाव के कारण गजल को भी विवाद के घेरे से बचाया नहीं जा सका। हर कोई गजल को अपने-अपने कार्यक्षेत्र में घसीटने का दुस्साहस करता रहा और विवाद का घेरा बढ़ता ही रहा।

आज भी हिन्दी-उर्दू गजलकारों के मध्य खींचा तानी मची हुई है। पारम्परिक हिन्दी-गजल का इतिहास काफी प्राचीन है, उदाहरण के लिए अमीर खुसरो को लें। अमीर खुसरो ने (सन् १२५५-१३२४) अलाउद्दीन खिलजी के शासनकाल में हिन्दी में कविताओं का सृजन किया था। खुसरो की मातृभाषा हिन्दी थी किन्तु युग की साहित्यिक भाषा फारसी थी अत: वे उसे कैसे नकार सकते थे। वे जिस भाषा में कविता लिखते थे उसे वे 'हिन्दवी' के नाम से अभिहित करते थे। अमीर खुसरो की

गजल का एक शेर यहाँ द्रष्टव्य है-

"जब यार देखा नैन भर दिल की गयी चिन्ता उतर-
ऐसा नहीं कोई अजब राखे उसे समझाय कर।"

हिन्दी-गजल की परम्परा में अमीर खुसरो के बाद महात्मा कबीरदास जी की कुछ गजलें प्राप्त होती हैं। रहस्यवादी कबीरदास की गजल का एक अंश यहाँ प्रस्तुत है-

"न पल बिछुड़े पिया हमसे न हम बिछुडे पिया-से रे
उन्हीं से नेह लागी है हमन को बेकरारी क्या।"

अन्तिम मुगल-सम्राट बहादुरशाह जफर ने अपनी सशक्त लेखनी के द्वारा गजल की इस परम्परा को सम्बल प्रदान करते हुये हिन्दी-गजल को पोषित किया। बहादुरशाह जफर की गजल का एक शेर यहाँ उद्धृत है-

"रतियाँ गुजारूँ रोवत-रोवत दिन को गुजारूँ आहा खींचे।
मेरे मन की मो-सो न पूँछो, पूँछो मेरी विपदा-से।"

बहादुर शाह जफर के पतन के बाद आधुनिककाल में युग प्रवर्तक बहुआयामी साहित्यकार भारतेन्दु में युग प्रवर्तक बहुआयामी साहित्यकार भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने अनेक हिन्दी गजलें लिखकर इस परम्परा को आगे बढ़ाया उनकी अपनी शैली का एक शेर देखें-

"लिखाय नाँही देत्यो पढ़ाय नाहीं देत्यो
संया फिरंगिनि बनाय नाही देत्यो।"

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के अन्य समकालीन रचनाकारों में पण्डित प्रताप नारायण मिश्र, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' आदि कवियों की गजलों को भी इस परम्परा में रखा जा सकता है। पं. प्रतापनारायण मिश्र की निम्न गजल अपने समय की चिर-परिचित गजल है।

"दयानिधान हमारी विथा सुनो तो सही।
पुकार पुत्र की अपने पिता सुनो तो सही।
जो अपने लोगों के ऊपर दया नहीं करते-
कहेगा आपको संसार क्या सुनो तो सही।"

भारतेन्दु युग से फलती-फूलती हिन्दी-गजल आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के संरक्षण में पहुँचती है। द्विवेदी जी के सहयोगी कवियों ने गजल का स्वागत पूरे जोशो-खरोश के साथ किया और उसे उत्कर्ष की नयी-सरणि प्रदान की पं. गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' की हिन्दी-गजल अपने विकसित रूप में सामने आयी-

"कितने दुखिया बहते देखे दुख-सरिता में मझधार पड़े-
मैं मस्त रहा अपनी धुन में उद्धार किसी का कर न सका।
मैं ऐ त्रिशूल बतलाऊँ क्या किस-किस पर वार किये मैंने
पर बनकर ढाल निवारण में उद्धार किसी का कर न सका।"

द्विवेदी युग के सर्वप्रतिष्ठित कवि एवं साहित्यकार दद्दा मैथिलीशरण गुप्त ने अपने

परमप्रिय छन्द हरिगीतिका की भारती मे हिन्दी-गजल को सुसंस्कृत कर प्रतिष्ठित किया। निम्नाकित पक्तियों में हिन्दी-गजल के सजीव दर्शन होते हैं-

"इस देश को हे दीन बन्धो! आप फिर अपनाइए।
भगवान भारतवर्ष को फिर पुण्य भूमि बनाइए।
जड तुल्य जीवन आज इसका विघ्न बाधा पूर्ण है-
हे रम्ब! अब अवलम्ब देकर विघ्नहर कहलाइए।"

द्विवेदी-युग से परिमार्जन प्राप्तकर हिन्दी-गजल छायावाद के नये रंग-ढंग में रच-बस जाती है। जहॉ महाप्राण निराला एव जयशकर प्रसाद जी के प्रश्रय में रहकर हिन्दी-गजल अपने भाषिक एव छान्दसिक स्वरूप को और अधिक सौष्ठव प्रदान करती है। उदाहरण के लिये प्रसाद जी की एक गजल का नमूना ले-

"भर उठी प्यालियॉ, सुमनो ने सौरभ मकरन्द मिलाया है-
कामिनियों ने अनुराग भरे अधरों से उसे लगा ली है।
वसुधा मदमाती हुई उधर आकाश लगा झुकने देखो-
सब झूम रहे अपने सुख में तू ने क्यो बाधा डाली है।"

साथ ही महाप्राण निराला की हिन्दी-गजल अपनी मौलिक उद्भावनाओं के साथ देखते ही बनती है। निराला जी की गजल के कुछ अंश यहॉ द्रष्टव्य हैं-

"जो हस्ती से हुये हैं पस्त समझे है वही क्या है-
गुजरती जिन्दगी के साथ हरकत से भरी बाते।
कड़ाई से दबी है कोमला, यह माजरा सच है-
झपटने के लिए बलि पर सिकुडती हैं बली आतें।"

और फिर अनेक रचनाकारों ने हिन्दी-गजल को अपनी काव्य-साधना का एक अंश ही बना लिया। सन् १९६१ में शमशेर बहादुर सिंह की 'कुछ और कविताएं' शीर्षक काव्य-कृति प्रकाशित हुई जिसमे उनकी ७ गजलें संग्रहित हैं। इसके पश्चात सन् १९७४ में श्री दुष्यन्तकुमार अपनी गंगा-जमुनी गजलों को लेकर प्रकट हुए। जिनकी भाषा, शिल्प और कथ्य का अंदाज उर्दू गजलों की तरफ झुका हुआ है। किन्तु वे उसे बोलचाल की भाषा कहकर अलग से प्रतिष्ठित करने का सफल प्रयास करते रहे। हिन्दी-गजल के पुरोधा गजलकार श्री चन्द्रसेन 'विराट' जी की अद्वितीय सेवा को भुलाया नहीं जा सकता है। विराट जी 'जथा नाम तथा गुण' से सम्पन्न हिन्दी-गजल के यशस्वी हस्ताक्षर हैं। विराट जी की मजी हुई लेखनी से निर्झरित गजल के कुछ अंश प्रस्तुत हैं-

"दर्द दिल में भरा का भरा ही रहा।
घाव मेरा हरा का हरा ही रहा।
देवता रूठ बैठे चखा तक नही-
भोग सारा धरा का धरा ही रहा।"

हिन्दी गजल की इस परम्परा को परिपुष्ट करने वाले कवियो में श्री शिवओम

'अम्बर', डा. दयाकृष्ण विजय वर्गीय, 'कृष्ण' कुँवर बेचैन, प्रोफेसर रामस्वरूप 'सिन्दूर', डा. रोहिताश्व अस्थाना, डा. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त', रूद्रकाशिकेय, गिरिराज शरण अग्रवाल, डा. गिरिजानन्दन त्रिगुणायत 'आकुल', डा. उर्मिलेश ज्ञान प्रकाश 'विवेक', पुरूषोत्तम 'प्रतीक', डा. श्याम 'निर्मम', अनिल गौड, प्रो. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र', डा. रमा सिंह, केदारनाथ 'कोमल', डा नरेन्द्र 'वशिष्ठ', तारादत्त 'निर्विरोध', डा. अशोक 'अंजुम', पुरूषोत्तम मिश्र, 'मधुप', डा. नरेश, दर्शन 'बेजार' सतीश राज पुष्करणा, योगेन्द्र दत्त शर्मा, राजकुमारी 'रश्मि', रामकुमार 'कृषक', महाश्वेता चतुर्वेदी, हनुमन्त नायडू, विनोद कुमार, उइके 'दीप', दिनेश शुक्ल, मनोज तोमर, नीतीश्वर शर्मा 'नीरज', हस्तीमल 'हस्ती', राजगोपाल सिंह, पूरन शर्मा, रामगोपाल 'परदेशी', राम बहादुर सिंह भदौरिया, रामावतार 'चेतन', अंसार कवरी, विजय किशोर 'मानव', दामोदर स्वरूप 'विद्रोही', सरोजनी अग्रवाल, ज्ञानवती सक्सेना, श्रीरामसिंह 'शलभ', चन्द्रप्रकाश माया, डा. गणेश दत्त सारस्वत, यादराम शर्मा, रामानन्द 'सागर', अटल बिहारी वाजपेयी एवं श्रीकान्त तिवारी 'कान्त' इत्यादि अनेक साहित्यकारों के नाम उल्लेख्य हैं।

जहाँ हिन्दी-गजल में भाव-पक्ष एवं विचार-पक्ष की बात है तो अधिकांश हिन्दी-गजलों में भारतीय सस्कारों का ही भावोन्नयन हुआ है। भारतीय ऐतिहासिक पौराणिक प्रतीकों एवं मिथकों के माध्यम से आधुनिक युगीन सन्दर्भो को स्वर प्रदान किया गया है। रूढ़िवाद, अन्धविश्वास, ढोंग, राजनीति, श्रम-पूँजी वैषम्य, जातिवाद, धर्म, मत, पंथ, आडम्बर, पाखण्ड, मिथ्याचरण, नारी उत्पीड़न, घूसखोरी, भ्रष्टाचार, नैतिक पतन, पश्चिमीकरण, खोखला विकास, शोषण दोहन इत्यादि अनेक सन्दर्भो को हिन्दी-गजल में पूर्ण सजगता एवं सफलता के साथ उभारा गया है।

पारम्परिक गजल के बदलते हुए स्वरूप को परिभाषित करते हुए डा. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त' की यह गजल एकदम सटीक है-

> "हैं न कामुक बोल वेश्या के सँजाए-
> कुलवधू के श्लोक मेरी गीतिकाएँ।
> बहुत पीछे-बहुत पीछे छोड़ आयीं-
> रूढि के निर्मोक मेरी गीतिकाएँ।"

अब हिन्दी-गजल परिचय के लिए किसी के आगे मोहताज नहीं है। युगीन समस्याओं एवं विषमताओं से क्षुब्ध गजल ने श्रृंगार का कंगन उतार कर फेंक दिया है। उसने ललकार की प्रखर तलवार अपने हाथों में उठा ली है, और अमराइयों की सुरक्षा का संकल्प लेकर निकल पड़ी है।

मुहावरे, लोकोक्तियाँ एवं भारतीय प्रतीको के प्रयोग से हिन्दी-गजल की सम्प्रेषणीयता को चार चाँद लग गये हैं। भाव-पक्ष एवं विचार-पक्ष की सफलता के साथ-साथ उसका कला-पक्ष भी अपने आप में अनूठा है। हिन्दी के मात्रिक-छन्द, रस, अलंकार, परिनिष्ठित शब्दावली, नये-नये रदीफ काफियो के साथ पूर्ण भारतीय अंदाज में रची

गयी हिन्दी-गजल अब अपने मौलिक स्वरूप में प्रतिष्ठित हो चुकी है। शिखरोत्कर्षी हिन्दी-गजल का भविष्य निश्चय ही उज्जवल है।

मैंने पॉच वर्ष पूर्व अपने काव्य-गुरू डा. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त' की हिन्दी-गजल पुस्तक 'नचिकेता नहीं कोई' का अध्ययन किया और गजलें लिखना प्रारम्भ किया। 'नचिकेता नही कोई' मे विशुद्ध हिन्दी की गजलें हैं। पौराणिक प्रतीको, मिथकों एवं मुहावरों से सम्पन्न हिन्दी गजले विविध युगीन सन्दर्भो की अक्षरश: झाँकी प्रस्तुत करने मे समर्थ है। इसके अलावा विभिन्न विद्वानो की पुस्तके, आकाशवाणी दूरदर्शन के प्रसारण एव शताधिक पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा भी गजलों का रसास्वादन प्राप्त करता रहा, साथ ही गजलो का प्रणयन भी अविकल गति से चलता रहा।

प्रस्तुत गजल सग्रह 'चादनी के घर' में मेरी शताधिक हिन्दी-गजले संग्रहीत हैं। गजलों के संशोधन एवं परिमार्जन में मेरे काव्य गुरू डा 'अनन्त' जी ने पूरी कृपा की है। मैं उनके प्रति नमन निवेदित कर रहा हूँ। कवि विद्वान एवं परम सन्त श्रद्धेय पं. गिरिश चन्द्र ओझा जी ने महत्वपूर्ण सुझाव दिये मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ डा उर्मिलेश जी ने अपनी सारगर्भित टिप्पणीयों से कृति को उपकृत किया है आभारी हूँ। श्री छोटेलाल मौर्य जी ने प्रकाशन में सहयोग किया, वे साधुवाद के पात्र हैं। इसके अलावा सुधी पाठकों की शुभकामनाऍ एवं आशीषो ने मेरे गजल लेखन को सम्बल प्रदान किया है मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। 'चॉदनी के घर' की गजलें साहित्य-भुवन के किसी भी कोने मे चॉदनी बिखरा सकीं तो यही मेरी रचना धर्मिता की सफलता होगी और सुधी जनों के स्नेह का फल।

-सुरेश कुमार शुक्ल 'सन्देश'

दुर्गाअष्टमी चैत्र संवत् २०५७

अनुक्रम

जयति-कादम्बिनी!

जयति कादम्बिनी! जय-जय।
सजा मनुजत्व की शुभ लय।

सहज-चिति प्रस्फुरित हो नव-
उदित हो शान्ति सुख अद्वय।

प्रखर-गति जागरण-अक्षर-
प्रवाहित कर हरण भव-भय।

धरा पर धर्म-ध्वज फहरे-
सके हो सभ्यता-संचय।

ऐक्य कर निर्झरित सस्वर-
विश्व-बन्धुत्व कर चिन्मय।

❑

देश-हमारा

नैसर्गिक सुषमा से मण्डित प्यारा देश हमारा।
आध्यात्मिक सूत्रों का है भण्डारा देश हमारा।

हो न सका भूतल पर कोई समता करने वाला-
अखिल विश्व में दीप्त-दिवाकर न्यारा देश हमारा।

गौरव से उन्नत गिरि जिसका बना मुकुट मणि शोभन,
धरती पर मानवता का उजियारा देश हमारा।

ऋषि-मुनि सब पावन-प्रज्ञा की ज्योति जगाते आये,
विद्या का शिखरस्थ मनोहर तारा देश हमारा।

धर्म, पंथ, मत, जाति, वर्ण सबको है राह दिखाता-
खुला हुआ शुभ संस्कृतियों का द्वारा देश हमारा।

जगा रहा मनुजत्व, पी रहा कटुता सब जगभर की,
उदय-अस्त तक प्रसरित भाई-चारा देश हमारा।

❑

मैं भारत हूँ

सर्व धर्म समभाव संजोकर मैं भारत हूँ।
विद्या, बुद्धि, विवेक उजागर मैं भारत हूँ।

सारे जग को दर्शन का दर्शन करवाता-
प्रखर-ज्ञान की गंगा सुखकर मैं भारत हूँ।

वासन्ती परिवेश कभी, फागुन देता मैं-
दीवाली के दीप जगाकर मैं भारत हूँ।

कभी वेद, गीता, कुरान, बाइबिल कभी मैं,
गुरूवाणी का पाठ सहज स्वर मैं भारत हूँ।

मैं उपवन हूँ काँटे फूल सभी दुलराता,
मलयानिल बिखराकर घर-घर मैं भारत हूँ।

सदा समन्वयवाद जगाता रहता जग मैं-
धरती पर श्रृंगार मनोहर मैं भारत हूँ।

आश्रयदाता युग-ऋषियों का सत्य सनातन-
शिवं सुन्दरम् का छवि-सागर मैं भारत हूँ।

नित्य नया 'सन्देश' जगाता ही रहता मैं,
मानवता का अक्षर-अक्षर मैं भारत हूँ।

❑

बँसुरिया

बरसाने की ताज बँसुरिया।
कौन बजाये आज बँसुरिया।

ब्रज का मृदु संगीत सहेजे,
सरगम का अंदाज बँसुरिया।

मोहन के अधरों की शोभा-
राधा की है लाज बँसुरिया।

भूल न पाये जिसे अभी तक,
यमुना-तट, स्वर-साज बँसुरिया।

चाह यही मोहन के दिल पर,
कर ले फिर से राज बँसुरिया।

मानवता के मन्त्र फूँक दे-
पशुता आये बाज बँसुरिया।

❑

अँसुआ

कभी-कभी अँखुआते अँसुआ।
यादें बहुत हिलाते अँसुआ।

सोयी व्यथा जगा जाते हैं-
करूणा में नहलाते अँसुआ।

पीड़ाओं के बने सहोदर-
हर पल साथ निभाते अँसुआ।

कभी गीत विरहा के गाते-
गजलें कभी सुनाते अँसुआ।

दर्द बाँट लेते हैं सबका,
मोती किन्तु लुटाते अँसुआ।

कभी दुखों में हैं लहराते-
कभी खुशी में आते अँसुआ।

जब सुधियाँ सपनों में आतीं,
सोयी पीर जगाते अँसुआ।

❑

चाँदनी-रात

खिली चाँदनी रात आज है यौवन में।
खुशियों की बरसात आज है यौवन में।

महक उठा चन्दन यौवन का साँसों में,
पाटल हुए प्रभात आज हैं यौवन में।

कुहू-कुहू में स्वर धड़कन कोकिल करती-
नव वासन्ती प्रात आज है यौवन में।

मादकता का नद लहराने लगा प्रमद,
संयम पर आघात आज हैं यौवन में।

मन हो गया अतृप्त सिन्धु अभिनव रस का,
ज्ञात हुआ अज्ञात आज है यौवन में।

फूलों की तलवार आ टँगी है सिर पर-
सपनों की बारात आज है यौवन में।

छूट गये माटी के खेल-खिलौने सब-
कहाँ रही वह बात आज है यौवन में?

❑

जगह-जगह मरूग्राम

सखे! बीसवीं सदी में, प्यार हुआ व्यापार।
दिल से दिल की बात हैं, सपनों का संसार।

करना अब मत और की, भाई जय-जयकार,
घर-घर में है चल रही, पैसे की सरकार।

चुनरी जर्जर हो गयी, पुरवा की भरपूर,
पछुआ ने जब से किया, अपना यहाँ प्रसार।

सत्य, अहिंसा, न्याय सब, परेशान बद्हाल,
नोट-वोट में कब भला, हो सकती तकरार।

शोषण, दोहन ने किया, पोषण का आहार,
बन्धु! सिमट कर रह गया, प्रतिभा का आकार।

दे पायेगा क्या भला, ठीक-ठीक युग न्याय,
घोर विषमता का हुआ, खुद जब आज शिकार।

जगह-जगह पतझार है, जगह-जगह मरूग्राम,
धरती का कैसे भला, होगा नव श्रृंगार?

❑

कर ले अभी प्रबन्ध रे!

अरे स्वर्ग के फूलों! तुममें-
बसती केवल गंध रे!

भौतिकवादी भौंरे पागल-
लगते हैं मधु-अन्ध रे!

तुम तो व्यापारों में पड़कर-
भूल गये पावनता को,

प्रेम कहाँ बिकता बजार में,
वह पवित्र अनुबन्ध रे!

काँटे और गुलाब सहेजे,
मिला हमें जीवन कहता-

चक्रीकरण यहाँ सुख-दुख का-
रहता पूरित द्वन्द्व रे!

घड़ी दो घड़ी के जीवन में,
पी-ले मधुरस जी भरकर-

कल न रहे कल जाने कोई
लगे नया प्रतिबन्ध रे!

वर्तमान पर ही कर ले तू,
हर्ष और उल्लास सभी-

कल किसने देखा रे बन्दे!
कर ले अभी प्रबन्ध रे!

❑

गिरीं बिजलियाँ

पत्थरों की हुई बस्तियाँ।
झोपड़ी पर गिरी बिजलियाँ।

हंस भी डर गये देखकर,
लील मोती गयीं सीपियाँ,

रोटियाँ हैं इधर अश्रु की,
मुस्कराती उधर पूंजियाँ।

जब बहाते पसीना श्रमिक,
चमचमातीं तभी कोठियाँ

शर्ट चूहे कुतरने लगे-
आप भी पाल लें बिल्लियाँ।

वेदने! तू कहीं और जा,
काँच की हैं यहाँ आँखियाँ।

जब गयी थी विरह द्वार पर
चाँदनी को मिली गालियाँ।

आइने सब धुमैले हुए,
क्यों न हो बिम्ब में खामियाँ?

❑

राजनीति है

कैसे-कैसे रँग दिखलाती राजनीति है।
छैल-छबीली सी इठलाती राजनीति है।

कभी इधर का उधर, उधर का इधर कराती-
भाँति-भाँति से दिल बहलाती राजनीति है।

चिन्तन, मनन, आचरण, ज्ञापन, विज्ञापन सब-
अपने ही मन का करवाती राजनीति है।

कर देती दिग्भ्रमित तोड़ देती शिक्षा से-
नित्य युवाओं को फुसलाती राजनीति है।

सदा पालती ही रहती यह शिखण्डियों को-
गाँधी वीर-सुभाष भुलाती राजनीति है।

शोषण, दोहन, उत्पीड़न करती समाज का-
गुलछर्रे अब खूब उड़ाती राजनीति है।

भारतीय उच्चादर्शों का ढोल पीटती-
चिन्तन और चरित्र भुनाती राजनीति है।

वेश्याओं का हेय आचरण करने वाली
कुलवधुओं-सा रूप सजाती राजनीति है।

मामा शकुनी से न कभी कम है श्रम करती-
सदा परस्पर आग लगाती राजनीति है।

कभी न करती सृजन रंच भी मानव का हित
अँखुआये पादप झुलसाती राजनीति है।

❑

फागुन में

धुली चाँदनी रात आज फिर फागुन में।
डोल उठी मधुवात आज फिर फागुन में।

लगीं झूमने ईगुरिया-साँझें-मोहक-
हुए कंचनी-प्रात आज फिर फागुन में।

खटिया-खड़ी हो गयी संयम की फिर से-
करे असंयम घात आज फिर फागुन में।

छलक उठी मादकता बौरायी बगिया-
आयी भृंग बरात आज फिर फागुन में।

अहम्, द्वेष-विद्वेष विसर्जित हुये, हुई-
ऐसी रस बरसात आज फिर फागुन में।

कौन भला पुलकित न हुआ रस रंगो में-
घटी द्वैत की बात आज फिर फागुन में।

जाति, धर्म, मत, पंथ सभी रंगीन हुये-
फगुनाये सब गात आज फिर फागुन में।

❑

बसेरा कहाँ मिला?

हैं अभी अँधेरे ही पाये छविमान सवेरा कहाँ मिला?
बस प्रखर कंटकित पंथ मिले सुखदायी डेरा कहाँ मिला?

कविता है खोजी मरीचिका में और पत्थरों में ढूँढी-
मिल सके शब्द ही, संवेदन का भाव बसेरा कहाँ मिला?

जीवन की परिभाषा प्यारे! पुस्तक में कहाँ ढूँढ़ते हो?
सिखलायेगा जो अनुभव का वह चतुर-चितेरा कहाँ मिला?

कैसे-कैसे लोगों ने कैसे-कैसे पद हथियाये हैं-
पर युग-प्रतिभाओं को उज्जवल रजताभ उजेरा कहाँ मिला?

आँसुओं गुहार लगाओ मत यह बस्ती सबपत्थर की है-
अमराई मिली कहाँ इनको, कोयल का टेरा कहाँ मिला?

बस नागफनी कैक्टस के ही उपहार मिले इन शहरों को-
निर्ममता मन भर मिली इन्हें करूणा का घेरा कहाँ मिला?

इस युग के विषधर व्याल काल-से फन फैलाये दीनों पर,
हैं उन्हें अभी क्रोधित जन-मन का सिद्ध सपेरा कहाँ मिला?

❑

हुंकार है जीवन

कभी तलवार है जीवन।
कभी रसधार है जीवन।

कभी मधुमास है मोहक-
कभी पतझार है जीवन।

कभी है फुल्ल-पाटल तो,
कभी अंगार है जीवन।

कभी कर्त्तव्य ही केवल-
कभी अधिकार है जीवन।

कभी दुख-दर्द का सागर
कभी सुख-सार है जीवन।

कभी लगता बबूलों-सा,
कभी कचनार है जीवन।

कभी है नागफनियों-सा,
कभी सहकार है-जीवन।

कभी आलोचना बनता
कभी जयकार है जीवन।

कभी सुख-शान्ति का स्वर है...
कभी हुंकार है जीवन।

❑

प्यार बहुत है

घर अपना चन्दनवन साजन!
महक उठा है तन-मन साजन!

सावन गाओ, रस बरसाओ-
और भिगो लो यौवन साजन!

ढाई-आखर पढ़ो प्रेम का-
बन जाओ ज्ञानीजन साजन!

जीवन-पथ पर आ भी जाओ,
छोड़ो भी ये छुटपन साजन!

प्यार कहाँ पाते व्यापारी-
प्यार बहुत है पावन साजन!

कितने भोले फूल, कली, अलि,
कितना भोला उपवन साजन!

प्रेम कहाँ उन्माद-ध्वंस है-
प्रेम शान्ति का साधन साजन!

❑

वसन्ती!

आया है मधुमास वसन्ती!
कर ले कुछ रस-रास वसन्ती!

आयेगी चाँदनी एक दिन-
इतना हो न निराश वसन्ती!

कहीं गमकते पाटल मोहक,
सुर्खी लिये पलाश वसन्ती!

तुम्हें न फुर्सत हमें न फुर्सत,
यह कैसा अवकाश वसन्ती!

बदले-बदले इस मौसम में,
मन क्यों हुआ उदास? वसन्ती!

हरषायेगी- सुख पायेगी,
पाकर प्रिय का पास वसन्ती!

गरल पान कर ले जितना हो,
किन्तु लुटा मृदुहास वसन्ती!

चल कुछ युग की कविता पढ़ ले,
खेल न यों ही ताश वसन्ती!

ये निष्प्राण फूल कागज के,
इनमें कहाँ सुवास वसन्ती!

उनकी तो उन्नति निश्चित है,
वे साहब के खास वसन्ती!

अपने जीवन की परिभाषा-
कुछ दिन और तलाश वसन्ती!

❑

तेज-हवाएँ

घोटालों की हैं चर्चाएँ।
बहुओं की जल रहीं चिताएँ।

कत्ल, डकैती, गबन, अपहरण-
अपने युग की यही अदाएँ।

धुआँ, रसायन, तीखी-ध्वनियाँ,
रहे प्रदूषण दायें-बायें।

सुलग रहे ईटों के जंगल,
चलो आम्रवन में छिप जायें।

नगर-नरक पर्याय बन गये-
नया-नया फिर गाँव बसायें।

इधर न कोई दीप जलाओ-
इधर चल रही तेज हवायें।

इस जीवन की राम-कहानी
कहाँ-कहाँ हम और सुनायें।

❑

कैसे करूँ सिंगार?

जब-जब याद तुम्हारी आयी।
आँखों में बदली-सी छायी।

और सभी कुछ भूल गया मैं-
बस तेरी ही सुधि मन भायी।

कैसे करूँ सिंगार तुम्हारा?
बहुत बढ गयी है मंहगाई।

कुछ तो समझो मेरे मन की-
अपनी-अपनी कहते भायी।

कहीं ढालते हैं दृग-मोती-
कहीं बज रही है शहनाई।

सूर्य चढ़ गया है सिर ऊपर-
घटी-घटी-सी है परछायी।

आदि-अन्त से रहित लग रहा-
यह वैषम्य बड़ा दुखदायी।

❑

डोल-बयरिया!

रह-रह कर मत डोल बयरिया!
जीवन है अनमोल बयरिया!

यादों की ग्रन्थियाँ बँधी हैं-
बार-बार मत खोल बयरिया!

जगा रही दृग-बिन्दु अरे क्यों?
खोल न मेरी पोल बयरिया!

पतझर ले जा उड़ा सभी अब-
जीवन में रस घोल बयरिया!

ढाल आचरण में सच्चाई-
पीट न खाली ढोल बयरिया!

कटुता हटा, मिटा सब दुर्गुण-
सिखला मीठे बोल बयरिया!

अब फागुन के दिन आये हैं,
कर मत टाल-मटोल बयरिया!

❑

बाबू जी

इतने हुए उदार हमारे बाबू जी।
रखते कुछ न उधार हमारे बाबू जी।

लेते जेब खँगाल प्यार से तब लिखते,
केवल अक्षर चार हमारे बाबू जी।

बाहर से गाँधी जी, पर अन्दर-अन्दर,
करते मिथ्याचार हमारे बाबू जी।

फोकट का वे पान लपक कर ले लेते,
कर सिगरेट स्वीकार हमारे बाबू जी।

रामकहानी अपनी ही कहते रहते,
अवसर के हुशियार हमारे बाबू जी।

सबको डर है फाइल के रूक जाने का,
कौन कहे मक्कार हमारे बाबू जी।

खाकर नोट न पेट कभी भरता उनका।
भूखों के सरदार हमारे बाबू जी।

नहीं छोड़ते अपनों को भी मौके पर-
है तुमको धिक्कार हमारे बाबू जी!

❑

सो रहे फुटपाथ पर

पंथ पर कंटक प्रखर कैसे कहें?
कठिन जीवन का सफर कैसे कहें?

मील के पत्थर तिरोहित हो रहे-
तम रहा हर पल पसर कैसे कहें?

सो रहे फुटपाथ पर भूखे उदर-
सड़क पर युग का कहर कैसे कहें?

गरल का विस्तार कर विज्ञान ने-
किये विषपायी नगर कैसे कहें?

हो रहे मुर्च्छित सहज सद्भाव स्वर,
विकृत होती हर डगर कैसे कहें?

छापते अखबार कोरे लेख हैं-
कुछ न सकते कर गुजर कैसे कहें?

पुस्तकों में बन्द हैं उपदेश, पर-
हैं न जीवन में मुखर कैसे कहें?

कर रहे उदरस्थ नित्य हरीतिमा-
दैत्य जैसे हैं शहर कैसे कहें?

❑

जिन्दगी गरल है

अब जीवन लगता मरूथल है।
रही न कोई मृदु हलचल है।

नेताओं के यहाँ बुढापा,
गुलदानों में ज्यों पाटल है।

एक अकेला ही कुलदीपक,
वृद्धावस्था का सम्बल है।

वे तो अब पूँजी वाले हैं-
उनका तो भविष्य उज्जवल है।

सहज रूप पर ग्रहण लगा है,
आँख हुई बादल-बादल है।

बरसातों में झिल्ली ताने-
घूँट रही जिन्दगी गरल है।

आम नीम अपदस्थ हो रहे-
सक्रिय नागफनी का दल है।

❑

रस रास न आये

इस युग ने जीवन के मौलिक रंग उड़ाये।
क्यों मलयानिल चले? क्यों भला फागुन गाये?

एकाकी निरूपाय हुआ जबसे मन मेरा,
जाने क्यों मुझको कोई रस रस न आये?

बसीं बहारें है जब से कागजी शहर में-
तब से अपना गाँव निरन्तर उजड़ा जाये।

अमराई की छाँव प्रवासी हुई आजकल,
नागफनी घर-घर, द्वारे-द्वारे हरषाये।

घिरी अमा हर ओर सघन आवरण बनी है-
धवल चन्द्रिका मन-मन्दिर में कैसे जायें?

भड़क उठी हर दिल में नफरत की चिनगारी-
कैसे कोई गीत प्यार के मिलकर गाये?

कौन भला भाई-भाई का नाता समझे,
हुआ व्यक्तिगत जीवन एकल-राग सजाये।

❑

बोल कंगन!

दुख सघन वन।
है विरस मन।

कहाँ खोया,
प्रीति का धन।

सभ्यता अब,
हुई निर्धन।

गीत नीरस,
शुष्क सावन।

भ्रष्ट नायक,
त्रस्त जन-मन।

मौन सच का-
करूण क्रन्दन।

चुप हुआ क्यों-
बोल कंगन?

❑

हमारी गजलों में

वीणा का स्वर-सार हमारी गजलों में।
खुला हुआ रस द्वार हमारी गजलों में।

इस युग में व्याकुल मानवता की खातिर-
उमड़ा प्यार अपार हमारी गजलों में।

रूढि-अन्धविश्वास कट रहे हैं ऐसे-
है जैसे तलवार हमारी गजलों में।

कहीं भोर से अरूण अधर हैं और कहीं-
पूनम का संसार हमारी गजलों में।

कहीं प्रणय वेदना कहीं चातक के स्वर।
कहीं मिलन रसधार हमारी गजलों में।

कहीं मरूस्थल, नागफनी के दंश, कहीं-
है सावनी फुहार हमारी गजलों में।

कहीं व्यंग्य के बाण, प्रशस्ति कहीं उभरी-
है युग का व्यवहार हमारी गजलों में।

❑

मधुबनी हो गयी

दूधिया-दूधिया रोशनी हो गयी।
छवि-छटा निर्मला चन्दनी हो गयी।

देखकर आपको दंग हम रह गये,
पाँव से सर तलक झनझनी हो गयी।

आज पाहुन बना है शहर गाँव में,
पनघटों की हँसी अनमनी हो गयी।

एक नेता सुधारा गया आज तो,
हर तरफ देखिये सनसनी हो गयी।

प्रीति की बेल फूली-फली इस तरह-
पौधशाला हृदय की घनी हो गयी।

आ गये आप लेकर बहारें सभी-
बाग संयोग की मधुबनी हो गयी।

बज उठे प्यार के राग मोहक-मधुर,
वल्लकी आज फिर से धनी हो गयी।

❑

ढका शिवाला

श्याम-दुशाला।
बादल वाला।

नभ ओढे है
काला-काला।

जल चादर से
ढका शिवाला।

यमुना तट पर
मुरली वाला।

सलिल-सुधा से
पूरित प्याला।

सघन विजन में,
छिपा उजाला।

कभी हवाले-
कभी हवाला।

❑

गाँव पाटल बसाएँ

प्रीति के स्वर सजाये तुम्हारे लिए।
वाद्य अभिनव बजाये तुम्हारे लिए।

महफिलों में गये साथ ही साथ हम-
गीत-गाये लजाये तुम्हारे लिए।

सीख देते रहे लोग मुझको मगर-
राह पर हम न आये तुम्हारे लिए।

साज कम हैं अगर तो कहो क्या करें?
जिन्दगी भर बनाये तुम्हारे लिए।

जो हुआ सो हुआ और क्या चाहिए-
आग घर में लगायें तुम्हारे लिए।

टेसुओं का शहर छोड़ दो यदि कहीं-
गाँव-पाटल बसायें तुम्हारे लिए।

तुम धरो तो धरा पर कदम प्यार से-
चाँदनी हम बिछायें तुम्हारे लिए।

❑

दे रहे सन्त्रास क्यों?

माँगकर लाये अरे! सन्यास क्यों?
ले लिया सन्यास आये पास क्यों?

अब घुटन का सिन्धु पीने दो मुझे,
बार-बार बढा रहे सन्त्रास क्यों?

कभी संयम की रहे डींगें सुनाते,
अब असंयम के हुए तुम दास क्यों?

पाटलों की गंध क्यों भायी नहीं?
भा गये हैं अब विगन्ध पलाश क्यों?

बात करते थे कभी सुविकास की,
वरण करते आज आप विनाश क्यों?

वे नहीं जब आ रहे, उस पार हैं,
ले रहे हो फिर भला अवकाश क्यों?

चाँदनी रेशम बिछाती आ रही,
आपको कुछ भी न आता रास क्यों?

❑

खुशियों का पराग

अलसायी आँखें निशान्त में,
तारे सभी मलीन हुए।

पाकर शुभस्पर्श किरणों का,
अम्बुज-अरूण नवीन हुए।

अभिनव वेदध्वनि से द्विजवर,
करने लगे स्वस्तिवाचन-

कर अभिषेक मांगलिक नभ का,
दिनकर सहज कुलीन हुए।

कर परिवेश सुगन्धित अभिनव-
पाटल के यजमानों ने,

खुशियों का पराग बिखराया,
भर उर प्रीति अदीन हुए।

फसलों पर शबनम की जाली,
या लड़ियाँ मोती की हैं-

दूब कंटकित, सुषमित धरती,
मुखरित खग-स्वर बीन हुए।

पहने हैं काषाय बसन,
प्राची लगती है ऋषि-पत्नी।

केशरिया बाने में-या फिर
सैनिक युद्ध प्रवीन हुए।

❑

सावन में

कहे घटा कर प्यार आज फिर सावन में।
मत करना इनकार आज फिर सावन में।

भ्रमित कर रही गुंजित रिमझिम बूँदों की-
नूपुर की झनकार आज फिर सावन में।

चितवन तेरी आज निमन्त्रण लायी है,
आया मैं सरकार! आज फिर सावन में,

गूँज उठा पंचम स्वर मेरी धड़कन में,
साँसों में रसधार आज फिर सावन में।

चमक उठे प्रिय अंगों में तारे झलमल-
छवि-पूनमी-निखार आज फिर सावन में।

स्वर्ण-पर्व हो गये दिवस, रातें लगतीं-
चाँदी के त्यौहार आज फिर सावन में।

प्रीति रसवती हुई उभर कर ले आयी-
नवरस का उपहार आज फिर सावन में।

भरती पैंग विधुमुखी झूलें गर्वित हैं,
मधुर-मधुर श्रृंगार आज फिर सावन में।

❑

गाती नदिया

लहर-लहर लहराती नदिया।
थिरक-थिरक कर आती नदिया।

लिये सम्पदा निज अचंल में,
धरती पर भर जाती नदिया।

बाँध एकता के बन्धन में,
राष्ट्र-ऐक्य सिखलाती नदिया।

बनी साधिका निज संस्कृति की,
गीत, सभ्यता गाती नदिया।

शान्ति, स्वस्ति वाचन, वाचन कर-
उन्नति-मन्त्र जगाती नदिया।

महानगर से होकर निकली,
मल ढोती पछताती नदिया।

युग का गरल पी रही हर पल-
अमरत किन्तु लुटाती नदिया।

दुलराती यथार्थ को जी भर,
है इतिहास बताती नदिया।

मानवता का शंख फूँकती-
'नव-सन्देश' सुनाती नदिया।

❑

रूप के तारे सजा दो

प्यार के वारिज खिला दो।
दीप! जगमग जग जगा दो।

चाँदनी को क्यों बुलायें-
यदि तुम्हीं कुछ मुस्करा दो।

क्यों न देते गीत लिखने,
चाहते हो क्या बता दो?

पान कर लो गरल जग का-
पुण्य का अमरत लुटा दो।

लो समर्पण आज मेरा-
द्वैत को कुछ तो घटा दो।

चाह मेरी राधिका है,
प्रीति की वंशी बजा दो।

यामिनी पुलकित हुई है,
रूप के तारे सजा दो।

❑

चाँद हँसता रहा

प्रीति पलती रही।
छवि सम्हलती रही।

चाँद हँसता रहा-
रात ढलती रही।

अश्रु ढलते रहे-
आँख गलती रही।

फिर घड़ी पर घड़ी,
हाय! खलती रही।

जिन्दगी भी मुखौटे,
बदलती रही।

भावना भी निगोड़ी-
मचलती रही।

चेतना क्यों अभागिन
उबलती रही?

❑

तेरा वन्दन

प्यारा बचपन।
कितना पावन।

निर्मल-निर्मल।
चन्दन-चन्दन।

चन्द क्षणों पर-
वारा जीवन।

माया ऊपर-
जिसका स्यन्दन।

मोहित करता
सबका तन-मन।

जगमग करता-
घर-घर आँगन।

प्यारे बचपन!
तेरा वन्दन!

बार-बार शत-
शत अभिनन्दन?

❑

पिघले हुए हृदय से

अबकी बार गजल में चुनकर
मैं आँसू ही लाया हूँ।

अन्तर पट कविता में बुनकर-
मैं आँसू ही लाया हूँ।

मुझे छोड़ नि:सीम गगन के,
तारों में मुसकाते हो-

करूण कथा लिख व्यथा पृष्ठ पर
मैं आँसू ही लाया हूँ।

सपनों में यादों के मोती-
खूब सम्हाला करता हूँ।

पिघले हुए हृदय से भरकर,
मैं आँसू ही लाया हूँ।

बार-बार मेरी कविता में,
तेरा चित्र उभर आता।

कागज के टुकड़े ठुकराकर,
मैं आँसू ही लाया हूँ।

पंच-महाभूतों में बँधकर,
मैं बेबस हूँ तड़प रहा-

महामिलन की आस सँजोकर
मैं आँसू ही लाया हूँ।

❑

काँटों की देहात भली

फूलों के मनहूस शहर से,
काँटों की देहात भली।

क्षणभर की खुशियों के बदले,
आँसू की सौगात भली।

मधूमासी संसार आसरे से,
ज्यादा क्या दे देगा?

प्रीति बढा लो पतझारों से,
काँटों की यह बात भली।

क्यों बिखरी चाँदनी धरा पर?
क्यों तारे नभ में छितरे?

पास नही प्रियतम मेरे तो,
प्रिय मावस की रात भली।

डोल रहा क्यों मलयानिल?
क्यों सोयी व्यथा जगता है?

नीरस पंचम स्वर के बदले,
मौनव्रती की घात भली।

❑

शकुन की मछली

चीरकर दिल की तहों की,
यह गजल निकली।

और रूह के पृष्ठ पर-
फिर मोम-सा पिघली।

उभर आयी दृगों में,
बन विश्व की करूणा-

युग-अधर पर आज फिर है,
वह गजल मचली।

मरूथलों में भटक आयी,
आज गंगा तट-

कर निमज्जन हो गयी है-
खूब अब उजली।

अब न बंशी में फँसेगी,
लोभ के बस हो-

बन गयी है आज प्यारे!
शकुन की मछली।

युग व्यथा की कथा को,
कहती हुई दिन-रात-

कह रही है आवरण-
अनुराग का नकली।

❑

मुस्कुराना सखे!

कुछ नया है अभी कर दिखाना सखे!
जिन्दगी का दिया मत बुझाना सखे!

दर्द पीना सखे! वेदना पलना-
दूसरों में सुधा ही लुटाना सखे!

दंश सहना कठिन व्यंग्य के किन्तु तुम,
सौख्य का भाव नूतन जगाना सखे!

व्याधियाँ घेर लें धैर्य खोना नहीं,
अश्रु पीना सखे! मुस्कुराना सखे!

रातरानी खिले, चाँदनी भी ढले,
गीत कोई नया गुनगुनाना सखे!

खुद भले ही गरल पान करना पड़े,
हास ही हर अधर पर सजाना सखे!

लक्ष्य अति दूर हो, कष्ट भरपूर हो,
पन्थ पर तुम नहीं डगमगाना सखे!

फूल हों, तितलियाँ हों चमन ही चमन-
देखना दृष्टि को मत टिकाना सखे!

❑

बाज जमूरे!

रख ले सिर पर ताज जमूरे!
तू भी कर ले राज जमूरे!

शोषण, दोहन, उत्पीड़न कर-
चिड़ियों में बन बाज जमूरे!

कुछ दिन और झोपड़ी ऊपर
गिर ले बनकर गाज जमूरे!

घेरेगा पतझार तुझे कल-
साज अभी ले साज जमूरे!

तुझे मुबारक तेरा वैभव-
कुछ दिन और विराज जमूरे!

विगर्हणीय आचरण तेरा-
हुई कोढ में खाज जमूरे!

बलशाली नक्षत्र अभी हैं,
और कतर ले प्याज जमूरे!

❑

चाँदनी रात में

रातरानी पली चाँदनी रात में।
मुस्कुरायी कली चाँदनी रात में।

स्वप्न फिर याद के गाँव में आ गये-
पीर उर में फली चाँदनी रात में।

क्षण न भूले भुलाये मिलन के मधुर,
हर घड़ी फिर खली चाँदनी रात में।

दर्द हर गाँठ में फिर, उभरने लगा,
हाय! पुरवा चली चाँदनी रात में।

याद तेरी न टाले टली है प्रिये!
नींद ही बस टली चाँदनी रात में।

ताज महली हुई सृष्टि मैदान की,
मरू हुये मखमली चाँदनी रात में।

व्योम पर है सजी मोतियों की लड़ी,
आँख में भी ढली चाँदनी रात में।

❑

सजी आँसुओं से

है महल में उधर मोतियों की लड़ी।
तो सजी आँसुओं से इधर झोपड़ी।

ऐ महल! देखनी है अगर झोपड़ी,
सिर झुकाना पड़ेगा तुझे हर घड़ी।

दूध-रोटी उड़ाते उधर श्वान भी-
है इधर भूख उन्मत्त निर्दय बड़ी।

है सजे स्वप्न स्वर्णिम रँगीले उधर
सामने है इधर रोज उलझन अड़ी।

अब इधर मुस्कुराना मना हो गया-
झड़ रही है हँसी की उधर फुलझड़ी।

हैं उधर रंग मधुमास वाले मिले-
दृष्टि पतझार की है इधर आ गड़ी।

हैं उधर व्यंजनों के नमूने लगे-
नोन-रोटी इधर रोज खानी पड़ी।

❑

सब कुछ हुआ उधार

है वसन्त लाचार हमारी बगिया में।
आ पहुँचा पतझार हमारी बगिया में।

हे पत्थर के देव! रहो मन्दिर मे ही तुम,
मत आना सरकार! हमारी बगिया में।

तार-तार हो गया प्रीति का हर पत्ता,
ओले गिरे हजार हमारी बगिया में।

ऐसी कुछ पछुआ आयी इस बार इधर,
रही न एक बहार हमारी बगिया में।

रही बाँटती औरों को परन्तु अब तो,
सब कुछ हुआ उधार हमारी बगिया में।

अमराई का कठिन हुआ यापन भी अब,
लिप्टिस की बढवार हमारी बगिया में।

❑

बटोही!

अरमानों की विखर गयी बारात बटोही!
मन करता रहता प्राणों पर घात बटोही!

एकाकी निरूपाय किस तरह आगे जायें,
सूना पथ है घिरी अँधेरी-रात बटोही!

दस्यु-अंधड़ों ने लूटे छप्पर भी अपने-
लदी खड़ी है सिर ऊपर बरसात बटोही!

जब-जब मैंने दीप जलाये अँधियारों में,
तब-तब आया कोई झंझावात बटोही!

वर्षों की कामना सजा ले चाहे कोई,
कालचक्र में दिन तो केवल सात बटोही!

डगर-डगर विषप्याला लेकर खड़ा जमाना,
जीवन लगने लगा मुझे सुकरात बटोही!

क्या होगा अब परिवर्तन की इस बेला में,
क्या बतलायें सब कुछ है अज्ञात बटोही!

मची हुई हलचल सागर में जर्जर कश्ती,
कब तक झेले प्रबल तरंगाघात बटोही!

बाट जोहते हुए बहुत दिन अँधियारों में-
जाने कब आयेगा नया प्रभात बटोही!

मरूमरीचिका में अबोध-सा भटक रहा है-
पा न सका कोई भी मधुर प्रपात बटोही!

कभी पलाशों-सा भड़कीला लगता मुझको,
और कभी जीवन लगता जलजात बटोही!

बार-बार मर्यादाओं को तोड़ न पगले!
भूल कभी भी मत अपनी औकात बटोही!

पीड़ाएँ अब तोड़ रहीं सीमा बन्धन को-
कुछ पल और ठहर जा कर ले बात बटोही!

❑

भरोसे!

छल्ले रहा उछाल भरोसे!
करता बड़ा कमाल भरोसे!

इस महगाई की मण्डी में,
अपने खस्ता हाल भरोसे!

उनके अपने राजमार्ग हैं-
उनकी अपनी चाल भरोसे!

यही शहर पीड़ा का अपनी
तू भी डेरा डाल भरोसे!

मानवता के मन्त्र सीख ले-
हो जा मालामाल भरोसे!

लोभ, मोह, छल, छद्म, द्वेष, मद-
मन में शीघ्र निकाल भरोसे!

अपने अनुभव की लतिकाएँ-
डाल-डाल पर डाल भरोसे!

अभी दृगों में आँसू मौक्तिक,
अभी न इन्हें खँगाल भरोसे!

अपनी संस्कृति भूल हिलाता,
अँगरेजी रूमाल भरोसे!

नैतिक-मूल्यों के अभाव में,
जीवन है कंगाल भरोसे!

कुछ न आचरण में ला पाये-
रहा बजाता गाल भरोसे!

व्यथा-कथा अपने जीवन की,
रखना खूब सम्हाल भरोसे!

सूर्य, चन्द्र, धरती, तारे, नभ-
सबको घेरे काल भरोसे!

जीवन का गुरू नित्य नये ही
करता रहा सवाल भरोसे!

चाँदनी के घर

पा चुकी है भारती से वाञ्छित शुभ वर गजल।
बढ़ रही करती विजय अब दिग्दिगन्तों पर गजल।

काट बन्धन रूढ़ियों के कर रही श्रृंगार नव-
आ गयी है अब अमा से चाँदनी के घर गजल।

वन्दना के मांगलिक अभिषेक से अभिषिक्त हो,
वेद की पावन ऋचा-सी हो गयी अक्षर गजल।

बन गयी है पथ-प्रदर्शक भटकनों के पंथ पर,
विश्व की करूणा सहेजे, वेदना का स्वर गजल।

फेंकती घुँघरू ढहाती काम के कोठे सभी,
जहर का प्याला पिया मीरा बनी हँसकर गजल।

कूकती है कोकिला युग के विरस उद्यान में,
सुधा की बरसात सुखकर प्रेम का निर्झर गजल।

❑

फुटपाथ पर

आदमी-आदमी के लिए है जहर।
ढा रही जिन्दगी, जिन्दगी पर कहर।

इस गुलिस्ताँ में गुल कोई ऐसा नहीं-
साथ जिसके न हो बन्धु! कष्टक-प्रखर।

चाँदनी में रहे मुस्कराते मगर-
आँधियों में बने आँसुओं के शहर।

ऐ हवाओ! लुटाओ न गन्धें यहाँ-
ताक में है प्रदूषण कि ले जाए हर।

देख पाते न अन्धे हुए जौहरी-
गुदड़ियों में छिपे लाल फुटपाथ पर।

कोई 'सन्देश' मुझको न ऐसा मिला-
जो दिखाता मुझे शान्ति सुख की डगर।

❑

मानवते! तुझे चाहिए क्या?

परिवर्तन देख रही मानवते! तुझे चाहिए क्या?
उपवन देख रही मानवते! तुझे चाहिए क्या?

कथनी-करनी में पूरब-पश्चिम-सा अन्तर है-
नर्तन देख रही मानवते! तुझे चाहिए क्या?

खोज रहा बादल, धरती है तरस रही जल को,
सावन देख रही मानवते! तुझे चाहिए क्या?

सभी भूले, भूला अपनों का वन्दन अभिवन्दन-
यौवन देख रही मानवते! तुझे चाहिए क्या?

नीम नदारत हैं, तुलसी चौरों का पता नहीं,
आँगन देख रही मानवते! तुझे चाहिए क्या?

बहारें मौन मुखर कागज के फूल हो रहे हैं,
चेतन देख रही मानवते! तुझे चाहिए क्या?

❑

अब न वसन्ती रास रचाये

अरे! चाँदनी इधर न आये तो अच्छा है।
कोयल कोई गीत न गाये तो अच्छा है।

जीवन तो नीरखता का है दास हो चुका-
अब न वसन्ती रास रचाये तो अच्छा है।

यहाँ हो चुके एक रँग के ही अब हैं हम,
यहाँ न फागुन रंग बरसाये तो अच्छा है।

इधर पल रहे पीड़ाओं के कोष अपरिमित,
इधर न पुरवा अब लहराये तो अच्छा है।

यह मरूस्थल है दहकता का ही अभ्यासी-
अब न यहाँ बादल घहराये तो अच्छा है।

ध्वंसातुर विज्ञान-आयुधी अपने युग का-
शान्ति-क्रान्ति पादप अँखुआये तो अच्छा है।

❑

ऋतु परिवर्तन की

सुनते हैं सबकी लेकिन करते हैं मन की।
बदल गयी है परिभाषा मानव-जीवन की।

आदर्शों की रोज वकालत तो होती है-
किन्तु न जगती सोच भलाई में जन-जन की।

कहीं गरीबी चिथड़ों में दफनाई जाती-
कहीं चिताएँ सजती हैं पावन चन्दन की।

कहीं दुध मुँहें पानी को भी तरस रहे हैं-
कहीं श्वान टिक्कियाँ पा रहे हैं मक्खन की।

रहना सजग जरूरी लगता हर पल प्यारे!
आ पहुँची बेला है अब ऋतु-परिवर्तन की।

कदम-कदम पर जाल बिछे, धोखे बिखरे हैं-
उतर न शान्ति-कपोत! आस लेकर भोजन की।

❑

फुटपाथों तक

अब न रहा अन्तर पिचकारी बन्दूकों में।
हुई सभ्यता कैद आज है सन्दूकों में।

गिद्ध उतर आये शासन के फुटपाथों तक-
पेट रहा भर मानव केवल दो टूकों में।

हुई प्रसाधन के अधीन सुन्दरता अपनी-
कहाँ रह गयी मौलिकता युग के रूपों में।

लहराता ही रहा अतृप्त सिन्धु जीवन में।
तृप्ति झोंक दी गयी अन्ध जर्जर-कूपों में।

अब थोथा भी भरने लगे पेट में अपने,
रही न सार ग्रहण वाली क्षमता सूपों में।

बरगद कटे, नीम उजड़े, कचनार ढह गये-
छाँह ढूँढ़ती छाँह भटकती है धूपों में।

❑

कह दे सखे! चाँदनी से

अब देखो कब फागुन लौटे, सावन गाये।
कौन प्यार की वंशी को स्वर साध बजाये?

रूठ गये नूपुर, कंगन सबके सब तो फिर-
क्यों आया मधुमास मुझे कोई समझाये?

क्योंकर कोयल गाये? क्यों मलयानिल लहरे?
मुस्काये क्यों पाटल? क्यों मकरन्द लुटाये?

क्यों झुकते घन अम्बर में? क्यों धरा उभरती?
पावस से कह दो उन्मादक शर न चलाये।

मावस ही प्रिय हुई मुझे कुछ और न रूचता,
कह दे सखे! चाँदनी से अब इधर न आये।

चलो टेसुई शहर उबाऊ, छोड़ चलें हम,
राह देखती अमराई सिर-मौर सजाये।

❑

बन्धुवर!

है यहाँ कौन किसके लिए बन्धुवर!
बुझ गये सभ्यता के दिये बन्धुवर!

हम जिन्हें शुद्ध वैष्णव समझते रहे,
वे मिले तो मगर थे पिये बन्धुवर!

जुर्म पर जुर्म करते उधर वे रहे-
ओठ हम भी इधर हैं सिये बन्धुवर!

शोर-गुल से भरी है खचाखच सड़क-
व्यग्र फुटपाथ कैसे जिये बन्धुवर!

पृष्ठ अधिकांश पतझार से घिर गया-
प्राप्त ऋतुराज को हाशिए बन्धुवर!

भेज 'सन्देश' मुझको बुलाया अरे!
आप हैं अब कहाँ चल दिये बन्धुवर!

❑

है आँख देश की नम

चौपाल भेड़ियों की लगने लगी झमाझम।
वैभव-विलास उनका अब हो गया चमाचम।

मतलब न अन्य जन से चिन्ता न अन्य की है-
निज पेट पालते हैं उनको न किसी का गम।

वनराज ने लिया है वनवास आज क्यों फिर?
वन को उजाड़ने में छोड़ी न कसर कुछ कम।

आओ भरत! तुम्हें फिर भारत पुकारता है,
आओ लिये हँसी तुम है आँख देश की नम।

युग की धमार ने है ऐसी मल्हार गायी,
फागुन बता रहा है मधुमास पियेगा रम।

शहनाइयाँ बजे फिर शुचि शान्ति पाठ गूँजे,
निज देश को जगत का सिरमौर देख ले हम।

❑

काँच से सम्बन्ध ये

टूटते हैं टूटकर जाते बिखर हैं।
काँच-से सम्बन्ध ये कितने लचर हैं।

स्वप्न जैसे नींद भर आनन्द देते-
आँख खुलते ही सभी जाते गुजर हैं।

सघनता जाती चली वनवास को फिर-
यह अकेला मन विरस करता बसर है।

चाह ज्यादा मत किसी को चाहने दे-
भाव समता का सदा सुख का शहर है।

अधिक कटुता प्रेम ज्यादा शत्रु दोनों-
मूढ़ मन दे छोड़ दोनों ज्ञान गर है।

कब डरी महगाइयों से पूँजियाँ हैं-
टूटती केवल श्रमिक की ही कमर है।

❑

लिये खोखलापन भीतर

व्यथा हमारे उर-अन्तर की कोई आज टटोल गया।
मेरे हरे-भरे जीवन में आग कौन है घोल गया?

हृदय-पटल पिघला भर आया दृग के हुए प्रपात मुखर-
हुई निर्झरित करूणा, दृग जल रह-रह भिगो कपोल गया।

लक्ष्य भूल जीवन का अपने रहा भटकता इधर-उधर,
कभी न हो पाया केन्द्रित मन पछुआ में यों डोल गया।

रहे आवरण ढाँके निजपन लिये खोखलापन भीतर
न्यायाधीश समय का सब छलियों की पोलें खोल गया।

निर्मम दीपशिखा रोयी पछतायी थी निज करनी पर
हुआ शलभ बलिदान प्यार पर, देकर दर्द अमोल गया।

निशि का ढलता राज्य देखकर विकल म्लान नभ की सज्जा,
मैं भी चला गाँव अपने-तारों से चन्दा बोल गया।

❑

वेदना का सघन कानन

प्रकृति ने फिर से किये श्रृंगार नूतन।
नायिका-सी लग रही है मोहती मन।

रजत-रातें, स्वर्ण-दिन, पाटल-सवेरे,
साँझ-सिन्दूरी, हरित-पट-बाग शोभन।

शान्तिपाठ उचारते द्विज-वृन्द सस्वर-
रश्मिमण्डल का प्रभा में भव्य दर्शन।

विश्व-करूणा जलधि का मैं पान कर लूँ,
और खुशियों से भरूँ हर एक आँगन।

सभ्यता जब-से मिली हमको सिसकती-
हो गया उर वेदना का सघन-कानन।

लौट आये बाग में मधुमास फिर-से,
कर सके कोकिल मधुर-मृदु गीत गुंजन।

❑

मेरी-अँखियाँ

भीगी-भीगी मेरी अँखियाँ।
राह देखती तेरी अँखियाँ।

किन्तु न आये हो अब तक तुम-
पथ पर करतीं फेरी अँखियाँ।

लगा रही स्वागत मे तेरे-
मणि-मौक्तिक की ढेरी अँखियाँ।

तेरी ही आँखों से साजन!
कभी गयी थी घेरी अँखियाँ।

आना लौट शीघ्र ही प्यारे,
सह न सकेंगी देरी अँखियाँ।

इस सूने जंगल में लगती-
हैं निरूपाय अहेरी अँखियाँ।

आ गये पंछी

आ गया मधुमास कोई गीत गायें।
प्यार के बन मेघ फिर-फिर रिमझिमाएँ।

गा उठी है फिर मधुर-नवगीत कोकिल,
आयिए फिर रास-रस में डूब जायें।

महमहाता बाग महुआ की झड़ी से,
पाटलों से प्यार का फिर मन बनायें।

रातरानी आज पूर्ण उभार पर है,
गंध पूरित चाँदनी में फिर नहायें।

आ गये पंछी सभी अपने सदन में,
उर भवन में आस का दीपक जलाये।

मेनका बन छा गयी है छवि वसन्ती,
आप कौशिक बन न निज तप को गवायें।

❑

छोड़ दे आसरा

क्यों न बदला अभी मन बता दे सखे!
प्रीति की बाँसुरी अब बजा दे सखे!

गंध पूरित गगन में न अब नाच तू,
सत्य की भूमि पर मन लगा दे सखे!

चाँदनी के किले किल गये हैं मगर-
मावसों के लिये स्वर सजा दे सखे!

फूल को छोड़ दे उस भ्रमर के लिए
कण्टकों के उठे सिर झुका दे सखे!

छोड़ दे आसरा गंध-मकरन्द का-
तप्त-मरू-उर-भवन में बसा दे सखे!

पान कर ले गरल इस सदी का सभी,
घट सुधा का धरा पर लुटा दे सखे!

❑

चूड़ियाँ खनखनातीं रहीं

नव्य-छवि मुस्कुराती रही हर पहर।
चूड़ियाँ खनखनाती रहीं हर पहर।

हर-पहर आँख मोती सजाती रही-
दृष्टि पथ पर बिछाती रही हर पहर।

रातरानी महकती-गमकती रही-
गन्ध उर में समाती रही हर पहर।

बदलियाँ व्योम में नृत्य करती रहीं-
पीर मन की बढाती रहीं हर पहर।

वायु भी गीतिकाएँ सुनाती रही-
कोयलें गुनगुनाती रहीं हर पहर।

हर पहर चन्द्रमण्डल दमकता रहा-
याद तेरी सताती रही हर पहर।

❑

आलोक भरना चाहते हो

क्यों सुनहरे विहग के तुम पंख बनना चाहते हो?
गंध-बादल से भरे नभ में विचरना चाहते हो।

सन्धि कर ली है सलाखों से विहग ने प्रेम-प्रेरित,
छोड़ दो सपने सजाना क्यों बिखरना चाहते हो?

खेल लो तुम आँधियों से, पत्थरों से प्यार कर लो,
खार पी लो सिन्धु का सब यदि उबरना चाहते हो।

आँख शीशे की सहेजे रूप है निर्मम सखे! यह-
मधुर-करूणा को वरो यदि गजल लिखना चाहते हो।

प्रीति की वंशी बजाओ, रस लुटाओ, गीत गाओ।
बन लहर जन-मानसों में यदि उतरना चाहते हो।

आत्म-दर्शन कर हृदय में तुम भरो आलोक नूतन-
प्रिय-मिलन-उत्सव अगर कुछ भव्य करना चाहते हो।

❑

बदरवा!

रिमझिम झरे फुहार बदरवा!
अभिनव रस की धार बदरवा!

एकाकी निरूपाय हुआ मन,
तेरा व्यर्थ उभार बदरवा!

उमड़-घुमड़ कर क्यों तू मेरे-
दिल को रहा पजार बदरवा!

विरहोद्‌दीपक बूँदों के शर
और न मेरे मारे बदरवा!

अब होजा अनुकूल, अरे कुछ-
मेरी दशा विचार बदरवा!

बार-बार क्यों कर देता है,
यादों का संचार बदरवा!

❑

उषा से नयन

लग रहे आज कुछ हैं उदासे नयन।
ग्रीष्म ऋतु के पड़े हैं पियासे नयन।

जागते ही रहे रात भर इसलिए-
कुछ उषा से नयन, कुछ निंदासे नयन।

याद का बाँध रोके रहा नींद को-
अश्रु की धार ने हैं तरासे नयन।

निष्पलक देखते ही रहे हर डगर-
छा रहे हैं भरी जल घटा-से नयन।

रोशनी खुद नहीं पा सके चाह की-
पर रहे टिमटिमाते दिया-से नयन।

मिल न पाये अभी, सज न पाये अभी,
कह न पाये अभी कुछ पिया-से नयन।

❑

नागफनी पर मुग्ध है

कहाँ गाँव में रह गयी, अब अमराई शेष।
लूट लिया पतझार ने, वासन्ती परिवेश।

युग-बगिया में जग रहे, शूल, बबूल करील-
नागफनी पर मुग्ध हैं तुलसी वाला देश।

संसृति जलनिधि में भरे, हैं कितने विषकुम्भ-
पर पीने से डर रहे, प्रलयंकर गिरिजेश।

क्रान्ति-क्षेत्र में आज फिर, मोह ग्रस्त हैं पार्थ,
क्यों न कृष्ण फिर दे रहे, गीता का उपदेश।

घूसखोर करते नहीं, लज्जा की परवाह,
अर्थ-पिशाचों के लिए, सम है देश-विदेश।

कहीं समर्पण है नहीं, नहीं कहीं विश्वास,
किससे जाकर हम कहें? अपनी बात विशेष।

❑

आप अनोखे

खाये गुण-अवगुण के चोखे।
लगे कब नही आप अनोखे।

सरकारी धरती पर तुमने,
साधिकार लगवाये खोखे।

युग के स्यारों! खाल शेर की-
ओढ़ बने तुम अभिनव धोखे।

कितनी बार अगस्त्य बने तुम?
कितने गहरे सागर सोखे?

हो प्रवीण तुम ताक-झाँक में,
प्रिय लगते इसलिए झरोखे।

शक्तिमान हो पर क्या सकते-
साथ-साथ दो नावों को-खे?

❑

बदरिया

नये-नये रच पोज बदरिया।
घिर आती है रोज बदरिया।

कभी घुमड़ती, कभी गरजती,
जैसे पढ़ती ओज बदरिया।

व्यापक व्योम सरोवर में है-
श्यामा-श्याम-सरोज बदरिया।

रिमझिम-रिमझिम-रिमझिम करती
ले आती सुख-सोज बदरिया।

टार्च लिये बिजली की निशि में,
रही आज कुछ खोज बदरिया।

सप्त-रंग का चाप चढ़ाये-
लगती मुझे मनोज बदरिया।

❑

याद आया है।

रूप का सागर नहाया है।
सब सखे! तन-मन लुनाया है।

तृप्ति लहरों से न मिल पायी-
मरूथलों का देश भाया है।

कौन मृदुभाषी बना कोकिल?
गीत यह किसने सुनाया है?

आज सिहरन-सी उठी उर में,
भाव यह किसने जगाया है?

हृदय गुनता, बाचते जो दृग-
पाठ वह किसने पढ़ाया है?

अब चलो परदेश से वापस,
आज घर फिर याद आया है।

❑

दर्द की पुरवाइयाँ

आज फिर बौरा गयी अमराइयाँ।
मणिक-बेलों से सजी अगनाइयाँ।

खो गये थे तुम कहाँ मधुमास में?
टेरती ही रह गयीं अँगड़ाइयाँ।

कोयलों के कण्ठ विरहा गा रहे,
अब घुटन में जी रहीं तनहाइयाँ।

ले गये क्यों साथ वासन्ती पवन?
दे गये क्यों दर्द की पुरवाइयाँ?

ढल गया वह किन्नरी-सा कण्ठ भी-
अब डराने को खड़ी परछाइयाँ।

कामना है राष्ट्र में सुख-शान्ति हो-
पंथ से हटती रहें कठिनाइयाँ।

❑

चाँद ढकने के लिए

भूमि का सब ताप हरने के लिए।
हैं घिरे बादल बरसने के लिए।

मक्खियों के पल रहे परिवार हैं,
शीत में कल आप मरने के लिए।

फिर प्रकृति ने ओढ हरिताम्बर लिया-
पूर्ण जग, सुख पूर्ण करने के लिए।

बाल मक्के की सजी दुल्हन बनी-
घान का सुख चैन हरने के लिए।

चाँदनी! तू आज मलमल हो गयी,
चौलरे पर चाँद ढ़कने के लिए।

दे गयीं सन्देश कुछ बूँदे हमें-
सदा पावस याद रखने के लिए।

❑

भूल गये सन्देश

आज विश्व में है मचा, घर-घर खूनी फाग।
आँचल कोई भी यहाँ, रहा नहीं बेदाग।

मानवा मूर्छित हुई, नैतिकता बेहाल-
निष्ठा का दामन जला, लगी द्वेष की आग।

कहीं नहीं दिखते यहाँ, बड़े, सभ्य परिवार,
घर-घर में है बज रहा, निर्भय एकल राग।

नागफनी की छाँव में, जीवन हुआ सुखी न,
चुभन-घुटन पाकर बने, लोग कालिया नाग।

घृणा और विद्वेष की, चली आतपी वायु-
राष्ट्र हुआ निर्वस्त्र यों, ज्यों पतझड़ का बाग।

गीता और कुरान के, भूल गये 'सन्देश',
सोये-सोये हैं सभी, रहा न कोई जाग।

❑

फागुन में

बाबा देवर हुए रँगीले फागुन में।
लगते हैं कुछ रसिक हठीले फागुन में।

अधरों पर है हँसी थिरकती मन मोहक-
मधुशाले-दृग हुए नशीले फागुन में।

उड़ता रंग अँबीर मचलती पिचकारी-
लगते राग मल्हार सुरीले फागुन में।

मानव मन ही नहीं प्रकृति भी रँगी-रँगी,
कलियों के उर भाव लचीले फागुन में।

वासन्ती श्री का उभार है एक तरफ
एक तरफ हैं स्वप्न सजीले फागुन में।

एक तरफ कोयल के स्वर मोहित करते-
एक तरफ हैं फाग कटीले फागुन में। ❑

गजल मिली

थामें हुए गरीब का दामन गजल मिली।
अश्कों में नहायी हुई कुछ नम गजल मिली।

श्रृंगार-साज छोड़कर कोठों से आ गयी-
फुटपाथ की बनकर सखे! सरगम गजल मिली।

अब तो रही सहेज है श्रमबिन्दु प्यार-से,
ले हाथ में सुख शान्ति का परचम गजल मिली।

अब बात मावसों की भला क्या करें कहो-
है डूब चाँदनी में चमाचम गजल मिली।

ले खड्ग प्रखर हाथ में बन्धन उड़ा रही-
होकर स्वतन्त्र आज झमाझम गजल मिली।

अब दे रही 'सन्देश' है हर ओर नित्य नव
कर जागरण से आत्मिक संगम गजल मिली।

❑

करता सुख-संचार

क्षण-क्षण का आधार आज के युग में पैसा।
जन-मन का सुखसार आज के युग में पैसा।

जुड़ा झोपड़ी से महलों त्क नाता जिसका,
वही मारता मार आज के युग में पैसा।

भला बताओ कौन गाँव में अपने ऐसा?
लेता नहीं उधार आज के युग में पैसा।

धरती से अम्बर तक झटपट जो पहुँचाता,
वही कर रहा क्षार आज के युग में पैसा।

अपनों की अपनी दुनिया खुशहाल बनाता,
करता सुख संचार आज के युग में पैसा।

पहुँचाता 'सन्देश' धरा के कोने-कोने,
भरकर नया विचार आज के युग में पैसा। ❑

पहली पहुनाई है

आँगन में चाँदनी उतर अब आयी है।
तन-मन में विद्युत-तरंगी-सी छायी है।

कम्पित तारे नभ पर तेरा दर्शन कर-
महाप्रलय को आतुर-सी अँगड़ाई है।

उत्सुक है मन-प्राण तुम्हारे स्वागत में-
अपने भी बचपन की आज विदाई है।

धड़कन की सरगम प्राणों में गूँज उठी,
यौवन की पहली-पहली पहुनाई है।

पतझर की पीड़ाओं का अब अन्त लगे,
तेरी छवि वासन्ती श्री नियराई है।

काँटों पर चलते-चलते पग लहू-लहू
आप समझते स्वाभाविक अरूणाई है।

❑

अक्षर है मानस

मानव मूल्यों का अथाह सागर है मानस।
किये हुए उदरस्थ सिन्धु गागर है मानस।

भारतीय उच्चादर्शों की निरूपम प्रस्तुति-
ऋषियों की संस्कृति का अनुपम स्वर है मानस।

करता है यथार्थ का चित्रण भली-भाँति यह,
लिये हुये युग-बोध मूल्य अक्षर है मानस।

मानवता के मन्त्र उच्चरित करता हरपल,
भरे समन्वय भाव प्रीति का सर है मानस।

धर्म, सम्प्रदायों की कटुता धोने वाला-
जंग-मंगल हित आज बना शंकर है मानस।

लहर-लहर लहराया है प्रज्ञा का वारिधि-
मानवता की अटल कीर्ति भूधर है मानस।

❑

राजधानी गाँव में

आइये फिर चाँदनी के गीत गायें।
युग दिलों में प्यार की महफिल सजायें।

यों न आयेगा यहाँ कोई कभी भी,
प्यार की आवाज से सबको बुलायें।

महानगरों से गये हैं ऊब अब हम-
राजधानी गाँव में अपनी बनायें।

प्लास्टिक के कारपेट चुभने लगे हैं-
दूब की कालीन आँगन में बिछायें।

हरित-अंचल घट रहा है निज धरा का,
पेड़ घर-घर में चलो चलकर लगायें।

❑

मृत्यु है चिरसंगिनी

मरूथलों को भूल भी अब जायिए।
फिर गुलाबों की कथा दुहरायिए।

चाँदनी ने फिर सजा दी है सभा,
गीत कोई प्यार का मिल गायिए।

अब विदाई माँगता तम-तोम है,
आयिए रस-रास लेकर आयिए।

शेष हैं कुछ पल अभी इस उम्र के,
रंग में अपने प्रिये! रँग जायिए।

मृत्यु है चिरसंगिनी जिसकी, उसी-
जिन्दगी को यों न तुम ठुकरायिए।

❑

तुम्हारी किस्मत के

क्या कहने सरकार! तुम्हारी किस्मत के।
हम कायल हैं यार! तुम्हारी किस्मत के।

ब्याही है मुस्कान तुम्हारे अधरों को-
फूले फूल हजार तुम्हारी किस्मत के।

रहे वसन्ती दौर तुम्हारे महलों में,
बौराए सहकार तुम्हारी किस्मत के।

बसे पूनमी गाँव तुम्हारे सपनों में,
तारे हुए उदार तुम्हारी किस्मत के।

कभी न उगे बबूल तुम्हारे जीवन में,
छतराये कचनार तुम्हारी किस्मत के।

❑

प्रिय झोपड़ी बुलाती

अनमोल खो गया है मन का सितार अपना।
फिर बस नही सका है उजड़ा दयार अपना।

दुख-हास द्वन्द्व पूरित गतिशील है जहाँ में-
कब रह सका चिरन्तन सुख सार प्यार अपना।

गिरवी हुये सवेरे, साँझें बिकी-बिकी हैं,
लगने लगा मनुज को जीवन उधार अपना।

आओ महानगर से प्रिय झोपड़ी बुलाती-
है इन्तजार में अब दिल बेकरार अपना।

चलते रहें धरा पर नभ में न उड़ें हरगिज,
रच मूल्य मनुजता के कर लें प्रसार अपना।

❑

जब बात आयी

दिन गया सूरज ढला है रात आयी।
किसी के घर खुशी की सौगात आयी।

रो पड़े दो नयन उस फुटपाथ पर-
नमक-रोटी के लिए जब बात आयी।

विरह घन के नयन बरसे हैं निरन्तर-
कौन कहता है अभी बरसात आयी।

जा रहे थे हम सफर में जिन्दगी के-
अड़चनों की बीच में बारात आयी।

चाँदनी चंचल रजत रेशम उड़ाती-
साथ ले मधुगन्ध मलयज बात आयी।

❑

फिर व्यथा ने-

आग को किसने लगाया है?
किसी का घर क्यों जलाया है?

प्रीति का घट रिस रहा प्यारे!
द्वेष-कंकर क्यों चलाया है?

खिल गयी है फिर कली कोई,
फूल कोई मुस्कराया है।

आँसुओं से है गजल निकली-
फिर व्यथा ने गीत गाया है।

लक्ष्य पथ पर जब गिरे हम तो,
हमें साहस ने उठाया है।

❑

कब अमावस घिरे

वे सुलगने लगे द्वेष की आग में।
अब चलें मरूथलों से कहीं बाग में।

कर्णकटु स्वर शहर में ध्वनित हो रहे-
अब न वह बात है भैरवी राग में।

दंश है आदमी-आदमी के लिए-
विष न उससे अधिक बन्धुवर! नाग में।

फागुनी दौर महगा हुआ आजकल,
ढंग के रंग दिखते नहीं फाग में।

चाहती जिन्दगी कब अमावस घिरे-
चाँदनी कब रही उम्रभर भाग में।

❑

व्याध निर्मोहिया

दिन सभी जिन्दगी के गुजरते गये।
सीढियाँ-सीढियाँ हम उतरते गये।

कोश बहुमूल्य जो सीपजों के रहे-
वे सभी चाँदनी में बिखरते गये।

व्याध-निर्मोहिया स्वर सजाता रहा,
बाण से मृग भले ही कतरते गये।

स्नेह गलता गया, दीप जलता गया,
ज्योति से हैं शलभ प्यार करते गये।

रवि दहकता रहा, भूमि जलती रही,
ध्वज परिश्रम शिखर पर फहरते गये।

❑

बोल रे!

रो रहे हैं हंस हँसते काग हैं।
मरूथलों के देश लगते बाग हैं।

वल्लकी इस दौर की घायल हुई,
गूँजते स्वर हीन यांन्त्रिक-राग हैं।

दूध से हम पालते जिनको रहे-
विष उगलते सामने वे नाग हैं।

क्या भला सूरत दिखेगी बोल रे!
आरसी ही जब नही बेदाग है।

हो गयीं महगी गुलाली होलियाँ,
खूब सस्ते आज खूनी फाग हैं।

❑

ओठ सीते रहे

जिन्दगी के सभी घूँट पीते रहे।
रोज मरते रहे, रोज जीते रहे।

आँख सब कुछ रही देखती किन्तु हम-
दिल दबाते रहे, ओठ सीते रहे।

दग न पाये सही बस सुलगते रहे-
व्यर्थ बारूद के ज्यों पलीते रहे।

इस तरफ मावसों का बिछौना रहा-
उस तरफ चाँदनी के गलीचे रहे।

खुद नही स्नेह की बूँद तक पा सके-
राष्ट्र को रक्त से किन्तु सीचे रहे।

❑

उधर मधुमास क्यों?

जिन्दगी हर ओर आज निराश क्यों?
चाँदनी आयी परन्तु उदास क्यों?

कंस का आतंक बढता जा रहा-
कृष्ण फिर भी कर रहे हैं रास क्यों?

ये न तुमको डालते है घास भी-
बन रहे हो तुम अरे! फिर खास क्यों?

आ गये जब आप ही चलकर इधर
फिर भला रहता उधर मधुमास क्यों?

❑

चुनौती तुम्हें

भ्रष्टता के श्रगालों चुनौती तुम्हे।
दुष्ट विषदन्त-ब्यालों चुनौती तुम्हें।

आ गये हम भरत वंश अवतंश बन-
शक्ति निज आजमालों चुनौती तुम्हें।

शक्ति संधान है अब तुम्हारे लिये,
स्वयं को अब बचालो चुनौती तुम्हें।

सभ्यता सर मलिन मीन जिसने किया-
शक्ति हो तो छिपालो चुनौती तुम्हे।

चूसने राष्ट्र का रक्त देंगे न अब-
अस्त्र अपने सम्हालो चुनौती तुम्हें।

❑

गीत ढलते रहे

अश्रु के कोश दृग में मचलते रहे।
पर अधर पर नये गीत ढलते रहे।

एक पथ था दिखाया किसी ने सही-
रासते आप फिर भी बदलते रहे।

इस अमा से घिरे आपको देखकर,
रात भर दीप की भाँति जलते रहे।

जिन्दगी देखकर मुस्कुराती रही,
हम सिसकते रहे, राह चलते रहे।

उस तरफ चन्द्रिका छवि लुटाती रही,
इस तरफ प्राण रह-रह पिघलते रहे।

❑

मृदु हलचल

यह जीवन है नीरव मरूथल।
यहाँ न कोई है मृदु हलचल।

अब निरूपाय हुआ एकाकी-
कहीं खो गया है सब दल-बल।

जाने कब धरती झूमेगी-
जाने कब बरसेंगे बादल।

सूख गयी चाहत की नदिया-
हर पल है बस रेत रहा ढल।

औरों के फागुन बसन्त हैं-
अपना प्रिय पतझर है हरपल।

❑

सुलगती बगिया

हरी-भरी-सी जगती बगिया।
इस वसन्त में उगती बगिया।

गर्वोन्मद नायिका-नवेली,
बौरायी-सी लगती बगिया।

गुंजित है अलिगुंजन पल-पल
नूतन भाव उमगती बगिया।

ओढ़ बैठती कभी चाँदनी-
कभी रश्मि में रँगती बगिया।

रास रचाती कभी, कभी तो-
गोपी बनी सुलगती बगिया।

❑

आयी बहार

फगुनाया-सा लगता बसन्त आयी बहार।
हैं रंगे-रंगे लगते दिगन्त आयी बहार।

मधुमत्त हुए मन-भृंग गुनगुनाते-गाते-
बनते कलियों के क्षणिक कन्त आयी बहार।

चंचल हो गया मनन करने वाला खग-मन-
संवर्धित सुषमा श्री अनन्त आयी बहार।

छवि-छटा देख लहराते मन योगी जन के,
दृढ़-संयम का हो रहा अन्त आयी-बहार।

है धार असंयम की ऐसी कुछ धार-दार
ढह गये हिमालय-धैर्यवन्त आयी बहार।

❑

तरूणाई सत्यापित करता

आ बसन्त! है राह देखता जीवन-उपवन।
कब महुआ गमके, कब महके तन का चन्दन।

स्वागत गीत पढ रही धड़कन कोकिल सस्वर,
माधव! तेरा बारम्बार करूँ अभिनन्दन।

जीवन की कलिका में मृदु मुस्कान जगा दे,
दहका दे टेसूवन का फिर पूरा तन-मन।

है वसन्त शुभ तरूणाई सत्यापित करता,
लज्जा का आगमन सहज यौवन के आगन।

नाच उठी है अमराई सिर-मौर बाँधकर
बार-बार चाँदनी कर रही तेरा वन्दन।

❑

नाचतीं बिजलियाँ

आज मावस सहेजे हुए हर किला।
किन्तु युग से नही मुझको कोई गिला।

फूल झरते हँसी के चमन में कहीं-
तो कहीं आँसुओं का समन्दर मिला।

नाचतीं बिजलियाँ इंगितों पर कहीं-
तो कहीं है दिया भी रहा झिलमिला।

रस वसन्ती गमकते उधर हैं अगर-
पतझरों का पड़ा है इधर काफिला।

है उधर चाँदनी बन्धु! घर-आगने,
तो इधर बस रहा मावसों का जिला।

❑

फिर लुभाने लगे

हो गया भोर खग-वृन्द गाने लगे।
बाँसुरी मन्द-मन्थर बजाने लगे।

सो रहे थे अभी चाँदनी ओढकर-
चुपके-चुपके कहाँ आप जाने लगे।

रोशनी माँगकर क्या करें बन्धु! हम-
वे शहर उल्लुओं के बसाने लगे।

है चुनावी बिगुल क्या बजा देश में,
बन्धु! बहुरूपिये फिर लुभाने लगे।

नाव है देश की दिग्भ्रमित हो गयी,
सूर्य जबसे यहाँ के ठिकाने लगे।

❑

आये बादल

घूम-घूम कर आये बादल।
घहर-घहर कर छाये बादल।

प्यास मिटा देंगे धरती की-
इतना जल भर लाये बादल।

भीगे-भीगे चिड़ियों के पर,
तितली को डरवाये बादल।

सूरज को ढक लेते घिर-घिर,
दिन को रात बनाये बादल।

हैं ललकार रहे गरमी को,
गरज-गरज घहराये बादल।

❑

हुआ निर्दय

आज यौवन की घटी लाली।
सभ्यता की नदी है खाली।

पाटलों के दल डरे-सहमे,
हुआ निर्दय बाग का माली।

रीतते टुक हैं न दुख के घट-
हुई खाली सौख्य की प्याली।

द्वेष की आँधी बढी आयी,
घृणा की बदली घिरी काली।

प्यार के बाजार में अब तो
स्नेह का सिक्का हुआ जाली।

❑

इस मन-मन्दिर में

पाटल के हैं पुंज तुम्हारे अभिनव कर में।
यादों के बुलबुले उठ रहे निज उर-सर में।

बिखराती चाँदनी हँसी अधरों की तेरे-
और व्यथा के गीत उग रहे अपने स्वर में।

तुम सावन को रहे कैद में अपनी बाँधे-
प्राण! सुलगती रही आग मेरे अन्तर में।

तड़पन-घुटन और टूटन सन्त्रास दिया बस
क्यों न घोल दी मृत्यु विरह के उष्ण जहर में?

रहे दूर ही दूर दीप्त टेसूवन बन कर-
किन्तु चलाते रहे कठिन शर पहर-पहर में।

❑

हुई अमावस खास

छूटी अन्तिम आस हमारे जीवन की।
रही अनबुझी प्यास हमारे जीवन की।

उगती रही व्यथा उर-धरती पर पल-पल
बगिया रही उदास हमारे जीवन की।

घिर जाते घन खुशियों के मन-अम्बर में-
अधरों आती हास हमारे जीवन की।

रूठी हुई चाँदनी मानो चली गयी-
हुई अमावस खास हमारे जीवन की।

❑

प्यारा-सा बचपन

अब न लौटकर आयेगा प्यारा-सा बचपन।
यादों में ही गायेगा प्यारा-सा बचपन।

कहीं छिप गया है अतीत के अलख पृष्ठ में-
सपनों में अँखुआयेगा प्यारा-सा बचपन।

जिसने चलना सीखा था बूढ़ी उँगली-से,
लाठी उसे थमायेगा प्यारा-सा बचपन।

माँ की लोरी सुनकर ही आती थी निंदिया-
फिर-फिर याद दिलायेगा प्यारा-सा बचपन।

चन्दा-तारे देख मचल जाया करता था-
अब तो बस तरसायेगा प्यारा-सा बचपन।

लोट-लोट धरती-माँ के पावन आँचल में-
अब न कभी मुस्कायेगा प्यारा-सा बचपन।

❑

न्याय तेरा यहाँ

यदि घिरा है अमा का अँधेरा यहाँ।
तो हँसेगा सखे! फिर सवेरा यहाँ।

जग रहा द्वेष का नाग यदि है अभी,
प्यार का भी बनेगा बसेरा यहाँ।

है चतुर्दिक घृणा ही भ्रमण कर रही-
लग रहा प्रीति का क्यों न फेरा यहाँ।

सत्य का पंथ एकल हुआ संकुचित,
झूठ विस्तार प्रतिपल घनेरा यहाँ।

बन्धु! काँटे पथों के सहोदर हुए,
अब न सरसिज रहा बन्धु मेरा यहाँ।

रे समय! रूठ मुझसे नहीं इस तरह-
मान्य मुझको सभी न्याय तेरा यहाँ।

❑

वह देश है

आजकल बदला हुआ परिवेश है।
हर तरफ विद्वेष ही विद्वेष है।

'विश्व है परिवार' जिसका मन्त्र था,
घोर टूटन से ग्रसित वह देश है।

है भरा कीचड़ लबालब दिलों में,
किन्तु रहता चमाचम बस वेश है।

जहाँ कंगन की खनक गुंजित रही,
पापम्यूजिक अब वहाँ सविशेष है।

आर्य संस्कृति को बचाने के लिये,
एक हो जाओ यही 'सन्देश' है।

❑❑

सुरेश कुमार शुक्ल 'सन्देश'

पुत्र : श्रीमति राजरानी शुक्ल एवं श्री श्रीराम शुक्ल

जन्मतिथि : पाँच फरवरी सन् बहतर (05-02-72)

जन्म स्थान : गोला गोकर्ण नाथ, जिला-खीरी (उ.प्र.)

शिक्षा : एम.ए. हिन्दी

रचनाएँ प्रकाशित : श्री तपेश्वरी चालीसा (भक्ति-काव्य)
श्री राम-जीवनम् (खण्ड-काव्य)

अप्रकाशित :
- जय-विवेकानन्द (महाकाव्य)
- भारत-गौरव (स्फुट काव्य)
- उत्सर्ग (खण्ड काव्य)
- मील के पत्थर (सवैया-घनाक्षरी)
- पीड़ओं के वंश (दोहा सतसई)
- पीड़ा के शहर (गज़ल संग्रह)
- चाँदनी के फूल (मुक्तक संग्रह)
- गीत-आपके (गीत संग्रह)
- प्रकृति-सुन्दरी (निबंध संग्रह)
- व्यक्तित्व एवं कृतित्व (स्व.छन्दाचार्य गोमती प्रसाद पाण्डेय कुमुदेशः पर लिखी समीक्षा कृति)
- इसके अतिरिक्त समय-समय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं एवं सामूहिक काव्य संकलनों में रचनाओं का प्रकाशन।
- आकाशवाणी लखनऊ से प्रसारण।

आवासीय पता : श्री हनुमान मन्दिर, लखीमपुर रोड, गोला गोकर्ण-नाथ,
खीरी -262802 (उ.प्र.)